13

बौद्ध धर्म-दर्शन में आम्रपाली की दीक्षा- *एक समीक्षात्मक अध्ययन*

डॉ. रामहेत गौतम
सहायक प्राध्यापक संस्कृत,
डॉ.हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय सागर म.प्र.

दुःख-निवृत्ति ही प्रत्येक दर्शन का ईप्सिततम् है। दर्शन में प्रत्येक प्रज्ञावान व्यक्ति किसी विषय या समस्या से संबन्धित मूल तत्त्वों, आधारभूत मान्यताओं व सिद्धान्तों का निष्पक्ष एवं तर्कसंगत परीक्षण कर औचित्यविचार पूर्वक पालन करता है। तर्क-वितर्क की योग्यता सम्यक् शास्त्रानुसीलन से ही प्राप्त हो सकती है। सद् शास्त्र समस्त संदेहों का नाशक व अर्थ का प्रकाशक माना जाता है।

अनेक संशयोच्छेदि परोक्षार्थस्य दर्शकम्।
सर्वस्य लोचनं शास्त्रं यस्य नास्त्यन्ध एव सः।।[१]

अतः सांख्यकारिका कार ईश्वर कृष्ण ने दुःखनिवृत्ति के लिए शास्त्र जिज्ञासा की बात कही -

दुःखत्रयाभिघाताज्जिज्ञासा तदपघातके हैतौ।
दृष्टे साऽपार्था चेन्नैकान्तात्यन्तोऽभावात्।।[२]

शास्त्र जिज्ञासा की पूर्ति कुशल शास्त्रज्ञ की शरण में ही सम्भव है। अतः शास्त्र जिज्ञासा युक्त आम्रपाली शास्त्रज्ञों की शरण पाने के लिए लालायित रहती थी। परन्तु शास्त्रज्ञ उसे शरण देने को तैयार नहीं थे, क्योंकि मुक्ति मार्ग की तात्कालीन शास्त्रीय मानकों के अनुसार वह अपात्र मानी जाती थी। ब्रह्मविद्या का अधिकारी वही माना जाता था जिसने वेदांगों के साथ वेदों का अध्ययन कर उनके अर्थ को अपने अनुकरण में ले लिया हो। निषिध्य व काम्य कर्मों का त्याग कर दिया हो। नित्य-नैमित्तिक कर्मों को करने वाला हो। प्रायश्चित तथा उपासना आदि करने वाला साधनचतुष्टय सम्पन्न प्रमाता ही वेदविद्या को जानने का अधिकारी होता है।[३] किन्तु आम्रपाली जैसी स्त्रियों को ब्रह्मविद्या के प्रथम पायदान वेदाध्ययन तक की पात्रता नहीं थी। अतः इसके द्वारा ब्रह्म विद्या को जानने की सोचना वन्ध्या के पुत्र की कल्पना करने के समान था। उस समय एक गणिका स्त्री को प्रव्रज्या देना सामान्य बात नहीं थी क्योंकि सोने-चाँदी के थोड़े से टुकड़ों के वदले देह व्यापार जैसे नीचकर्म [४] करने करने वाली के निवास को नीचघर अथवा गणिकाघर [५] और उसे दुरत्थिकुम्भदासी[६] कहा जाता था। आम्रपाली भी वेश्या(गणिका) ही थी। राजसी रहन-सहनहोने पर भी कुलबधुओं द्वारा निन्दित होती थी।[७] वह कुल परम्परा से गणिका नहीं थी। वह भी इस सभ्य समाज में पैदा हुई परन्तु 'कृपणं ह दुहिता ज्योतिर्ह पुत्रः परमे व्योमन्।'[८] जैसी दूषित मानसिकता वाले सामाजिक की निर्ममता का शिकार बनी और झाड़ियों में फेंक दी गयी। वर्तमान मुजफ्फरपुर से १८-२० मील पश्चिम में वैसोढ़ नामक एक छोटे-से गाँव के चारों ओर कोसों तक फैले खण्डहर आज भी स्मृति दिलाते हैं कि यहाँ कभी वैशाली नामक समृद्धशाली विशाल नगर था जो प्रबलप्रतापी लिच्छवि गणराज्यों के शासकों की रियायत थी। यहाँ धनाढ्य लोग निवास करते थे।[९] महानामन नामक सैनिक को अपने निवास के समीपवर्ती आम्रवन में वह नवजात कन्याशिशु मिली। उसका नाम अम्बपाली (आम्रपाली) रखकर उसका लालन-पालन किया। समय के साथ उसकी उम्र और रूप दोनों में वृद्धि हुई। उसका निखरता अप्रतिम लावण्य ही उसका वैरी बना और वहाँ के कानून-'राज्य की जो भी

कन्या अत्यधिक सुन्दर हो उसे किसी एक की पत्नि न होने दिया जाकर सभी नागरिकों के लिए सुरक्षित रखा जाये।[१०]' के अनुसार वैशाली के श्रेष्ठि चत्वार बाजार स्थित गणिका प्रासाद में स्थापित कर दी गयी। समय के साथ धनाढ्यों/राजाओं की विलासिता का साधन बनी। मगध सम्राट् शिशुनागवंशीय बिम्बसार के जीवक नामक पुत्र की मां भी बनी। आम्रपाली का जीवन ऐश्वर्यपूर्ण होने के बावदूद भी वह अपने जीवन से संतुष्ट नहीं थी। मन में चुभन थी कि–

को नु हासो किमानन्दो, निच्चं पज्जलिते सति।
अन्धकारेन ओनद्धा, पदीपं न गवेसथ।।[११]

अर्थात् जब सर्वत्र नित्य निरन्तर दुःख रूप अग्नि प्रज्वलित दिखायी दे रही हो, तब यह हर्ष किस बात का, तथा आनन्द किस बात का? जब तुम अन्धकारावृत हो तो उस अन्धकार की निवृत्ति के लिए दीपक (ज्ञानमार्ग) की गवेष्णा क्यों नहीं करते?

इस प्रकार अपने अन्तःकरण को टटोलते हुए उसकी ज्ञानपिपासा निशदिन बलवती हो रही थी। वह ज्ञानी मुनियों की शरण पाने को उद्यत रहती क्योंकि 'काचः कांचन संसर्गात् धत्ते मारकतीं द्युतिं'[१२] परन्तु उसका निन्दनीय कर्म ही उसका बाधक बन जाता। कोई तपस्वी उसे शरण देने को तैयार नहीं होता। फिर भी आम्रपाली इतना तो जान चुकी थी कि –

अत्ता हि अत्तनो नाथो, को कि नाथो परो सिया।
अत्तना हि सुदन्तेन, नाथं लभति दुल्लभ।।[१३]

अर्थात् मनुष्य स्वयं ही अपना स्वामी (उद्धारक) है। दूसरा कौन उसका स्वामी हो सकता है। पहले स्वयं को भली प्रकार से दमित कर लेने पर ही मनुष्य दुलर्भ नाथ (निर्वाण) को प्राप्त कर सकता है।

'उद्यमेन हि सिद्धयन्ति कार्याणि'[१४] अतः नारकीय जीवन से मुक्ति व सद्धर्मप्रवृति के लिए उसका प्रयास थमा नहीं। एक दिन अपने उपवन में बुद्ध के ठहरे होने की सूचना पाते ही समस्त सौन्दर्य प्रसाधनों व ऐश्वर्यभोगों का त्याग कर बुद्ध की शरण में गयी।[१५] बुद्ध के समीप आती गणिका को देखकर समस्त शिष्यों व अन्य लोगों के मन में नाना प्रकार के प्रश्नों को उठता देख बुद्ध कहते हैं–

तस्मादिदं भयं ज्ञात्वा बाह्यरूपेषु मा पत।
शुभमान्तरिकं रूपं यः पश्यति स पश्यति।।[१६]

अर्थात् स्त्री के वाह्य शारीरिक सौन्दर्य को देखने की अपेक्षा आन्तरिक शुचिता व शुद्धता को देखने वाला ही सद्दृष्टि सम्पन्न होता है।

इन्द्रियों व विषयों का बन्धन स्थायी नहीं है। जो विषय–कामना करता है वही बंधता है। इन्द्रियों की विषय प्रवृत्ति से मन प्रवृत्त होता है और मन की प्रवृत्ति से कामना की उत्पत्ति होती है। विना विचारे भोगनिमग्नता से दुःख होते हैं। अतः विषयासक्ति ही मनुष्य की विपत्ति का मूल कारण है।[१७] स्मृति खोये बिना, अपना सद् हितचिन्तन करते हुए अपने वास्तविक स्वरूप का ध्यान करें।

अभिवादनसीलिस्स, निच्चं बुड्ढापचायिनो। चत्तारो धम्मा वड्ढन्ति, आयु वण्णेसुखं बलं।।[१८] जानने वाली आम्रपाली बुद्ध को प्रणाम कर बुद्ध की आज्ञा पाकर हाथ जोड़कर विद्यार्थी की मुद्रा में बैठ जाती है। बुद्ध ने उसके समझने योग्य धर्मयुक्त वचन कहे– सामान्यतः शारीरिक सौन्दर्य को प्राथमिकता देने वाली स्त्रियों की मुक्तिमार्ग में प्रवृत्ति बहुत कम देखने को मिलती है। परन्तु इस अनित्य जीवलोक में तुम्हारी धर्मवृत्ति तुम्हारा सर्वोत्तम धन है। आयु बीतने पर यौवन, रोग से शरीर व स्वास्थ्य और मृत्यु से जीवन नष्ट हो जाता है, पर धर्म का नाश नहीं होता।[१९] सुख के पीछे दौड़ने वाले को कभी न कभी अप्रिय वस्तु का संयोग एवं प्रिय वस्तु का वियोग होता ही है। यह

पराधीनता है, इससे दुःख होता है। जबकि स्वाधीनता, इन्द्रिय संयम व अनासक्ति में बड़ा सुख है। यही सच्चा धर्म है। इसका मार्ग ही अचल-अटल है।[२०] समस्त इन्द्रियाँ पराधीन हैं। पराधीनता और अनैतिक प्रसव स्त्री का सबसे बड़ा दुःख है। पाँच कामगुण वाले निकृष्ट धर्म का सेवन न करें, प्रमाद लिप्त न हों, मिथ्या दृष्टि न अपनायें और अपने आवागमन को न बढ़ायें।[२१] 'अतः आम्रपाली तुम उचित निर्णय लो' ऐसा बुद्ध ने कहा। तरुणी परन्तु बुद्धि, गम्भीरता और समझ में वृद्धा के समान आम्रपाली बुद्ध-वचनामृत पान कर कामनाशून्य होकर स्वयौवन-भावों को तुच्छ समझती हुई, अपनी वृत्ति(वेश्यावृत्ति) के प्रति और अधिक घृणा से भर उठी। मुनिचरणों में प्रणाम करती हुई निवेदन करती है- 'धर्मलाभाय मे साधो! मद्भिक्षां सफलां कुरु।'[२२] धर्माभिलाषिणी आम्रपाली की उत्कट जिज्ञासा को भली-भाँति समझकर अपनी स्वीकृति के साथ आम्रपाली के अन्तःकरण में धर्मबीज स्थापित कर सन्तुष्ट हुए।[२३] गन्दगी व्याप्त राजमार्ग पर शुद्ध सुगन्धित कमलपुष्प की भाँति मानवसुलभ विकारों से युक्त मन में बुद्ध का सम्यक् ज्ञानोपदेश अपना सद्प्रभाव विखेरने लगा। बुद्धामृतज्योति आप्ता आम्रपाली अज्ञानान्धकारावृत गणिका के नारकीय जीवन क्लेश से निकलकर सर्वक्लेश शून्य पथ मध्यममार्ग में प्रवृत्त हुई। अब शारीरिक सौन्दर्य उसे तुच्छ लगता था। अन्तःकरण के सत् सौन्दर्य को जानकर पूर्णता प्राप्त भिक्षुणी का सम्मान जनक स्थान पाया, तथा दर्शन जगत में अद्वितीय उदाहरण बनी। बुद्ध धम्म, संघ शरण प्राप्त आम्रपाली ने निरन्तर निदर्शना-भावना करते हुए अर्हत्व प्राप्त किया। बृद्धावस्था में ढलते वाह्य स्वरूप के उद्धरणों से नवभिक्षुणियों और साधारण नर-नारी जगत को देह की नाशवान प्रकृति के बारे में बताती हुई कहती है -

कञ्चनस्स फलकं व सम्मट्ठं, सोभतेसु कायो पुरे मम।
सो बलीहि सुखमाहि ओततो, सच्चवादिवचनं अनञ्ञथा।। [२४]
एदिसो अहु अयं सुमुस्सयो जज्जरो, बहुदुक्खानमालयो।
सोपलेप पतितो जराघरो, सच्चवादिवचनं अनञ्ञथा।। [२५]

अर्थात् कभी मेरा शरीर भी सुन्दर व सुमार्जित स्वर्णफलक के समान चमकता था। वही आज वृद्धावस्था में अंगराग आदि से रहित, सूक्ष्म झुर्रियों से भरा हुआ, जर-जर, बृद्धावस्था एवं नाना प्रकार के दुःखों का घर मात्र रह गया है। सत्यवादी बुद्ध के वचन कभी मिथ्या नहीं होते।

इस प्रकार हम पाते हैं कि 'आम्रपाली की बुद्ध धर्म-दर्शन में दीक्षा' के सम्पूर्ण घटनाक्रम में बुद्ध के शुद्ध, सरल, सर्वग्राह्य, सर्वसमाज हितकारी सिद्धान्तो का उपदेश हुआ है। आम्रपाली की जीवन गाथा आज भी करुण-पुकार करती है कि अब वस करो, रोक दो इस निर्मम अत्याचार को। बालिका-भ्रूण हत्या, पैदा होते ही परित्याग से क्लेश मुक्ति की कामना व्यर्थ है। आम्रपाली का आत्म मन्थन पूर्वक सद्धर्म में प्रवृत्त होना यही सूचित करता है कि अपने कल्याण का मार्ग स्वयं बनाओ। आम्रपाली भली-भाँति जान चुकी थी कि ये सांसारिक ऐश्वर्यभोग दुःख ही देते हैं। इष्ट(शान्ति) का वियोग और जरा, रोग, मृत्यु आदि अनिष्टों का संयोग ही दुःख है। यही बौद्ध दर्शन का प्रथम आर्य सत्य है। आम्रपाली ने अनुभव किया कि इन्द्रिय सुख प्राप्ति की इच्छा (काम तृष्णा), वैभव प्राप्ति की इच्छा(विभव तृष्णा), जीवित रहने की इच्छा(भव तृष्णा) शान्त होने की अपेक्षा घृताप्ताग्निवत् निशदिन बढ़ती ही जाती है। तब बुद्ध ने कहा- तृष्णा की पूर्ति से सुख न मिलकर दुःख ही प्राप्त होता है। अतः तृष्णा ही समस्त दुःखों का कारण है। सबसे बड़ा दुःख तो जरा-व्याधि-मृत्यु है। जरा-मरण का कारण जाति(जन्म लेना), जाति का कारण भव(जन्म लेने की इच्छा) है। भव का कारण उपादान(जगत की वस्तुओं के प्रति राग एवं मोह), उपादान का कारण तृष्णा(विषयों के प्रति हमारी आसक्ति), तृष्णा का कारण वेदना(अनुभूति), वेदना का कारण स्पर्श(इन्द्रियों और विषयों के संयोग की अवस्था), स्पर्श का कारण षडायतन(आँख, नाक, कान, जिह्वा, त्वचा और मन), षडायतन का कारण नामरूप(मन के साथ गर्भस्थ शरीर), नामरूप का कारण विज्ञान(चेतना), विज्ञान का कारण संस्कार(कर्मफल), संस्कार का कारण अविद्या(अनित्य को

नित्य, असत्य को सत्य, अनात्म को आत्म समझना) है। इस प्रकार अविद्या ही समस्त दुःखों का कारण है। इस तरह ये द्वादश निदान जीव को जन्म-मरण के चक्र में घुमाते रहते हैं। यही भवचक्र है। इन द्वादश दुःख कारणों की श्रृंखला ही दुःख-समुदय है। इस श्रृखला में एक की प्राप्ति होने पर अन्य की उत्पत्ति होती है। यदि एक(कारण) नहीं होता, तो अन्य(कार्य) भी नहीं रहता। इसे आश्रित उत्पत्ति का सिद्धान्त/प्रतीत्यसमुत्पाद का सिद्धान्त कहा जाता है। दुःख के कारण की खोज हो जाने पर कारण के नाश के साथ दुःख से मुक्ति की सम्भावना बढ़ जाती है। अतः तथागत बुद्ध आश्वस्त करते हैं कि दुःख का नाश हो सकता है। दुःख का नाश मध्यममार्ग के परिशीलन से पूर्णतः हो जाता है। आम्रपाली को प्रब्रज्या देकर बुद्ध ने सूचित किया है कि उनका मध्यम मार्ग उत्कृष्ट-निकृष्ट का भेद किये विना सभी के कल्याण के लिए है। कोई भी किसी भी अवस्था में कुमार्ग का त्याग कर उनके मार्ग के माध्यम से मुक्ति पा सकता है। देशीय, जातीय, भाषायी आदि आधारों पर किसी को निषेध नहीं है। तथागत बुद्ध ने आम्रपाली को उपदेश उसके समझने योग्य भाषा(जनभाषा) में ही दिये। बुद्ध पाण्डित्य प्रदर्शन को नहीं बहुजन हित को प्राथमिकता देते थे। आज इस बात की अति आवश्यकता है कि लोगों को अधिक से अधिक जानकारी उनकी मातृभाषा में ही दी जाये। बुद्ध ने आम्रपाली से कहा कि हर क्षण परिवर्तित होती आयु के साथ परिवर्तित होता यौवन भी आयु के बीतने पर नष्ट हो जाता है। रोगों से शरीर तथा स्वास्थ्य का नाश हो जाता है। मृत्यु से जीवन का नाश हो जाता है। संसार में प्रत्येक वस्तु नदी के जलप्रवाह एवं दीपक की लौ की भाँति हर क्षण अपने मूल स्वरूप के नाश के साथ नवीनता धारण करती है। इस प्रकार संसार की प्रत्येक वस्तु क्षण भंगुर है। सृष्टि का संसरण हर क्षण होता रहता है, अतः यह संसार कहलाता है। बुद्ध ने आम्रपाली से कहा कि पाँच कामगुणों वाले निकृष्ट धर्म का सेवन न करें, प्रमाद न करें, मिथ्या दृष्टि न अपनायें और अपने आवागमन को न बढ़ायें। जिस तत्त्व का संसार में आवागमन होता है, वह वैदिक दर्शनों के आत्म तत्व से भिन्न नामरूप तत्व है। 'मैं' एक मानसिक अनुभव है, प्रत्यक्ष गोचर मानस प्रवृत्तियों का पुंज है। यह अस्थाई शरीर और मन का संकलन मात्र है। मन तथा मानसिक प्रवृत्तियों को 'नाम' और अस्थाई शरीर को 'रूप' भी कहा जाता है। इस प्रकार मैं का भाव और अस्थाई शरीर का संयोग ही नामरूप है। इस नामरूप को रूप, वेदना, संज्ञा, संस्कार और विज्ञान पंच स्कन्धों का समूह भी कहा जाता है। यह पंच स्कन्ध नामरूप अनित्य है। विज्ञान (विचार) के अविच्छिन्न प्रवाह की निरन्तरता का नये शरीर में बने रहना ही पुनर्जन्म है। एक दीपक से दूसरे दीपक में लौ के प्रवाह की भाँति हमारे विज्ञान एवं कर्मफल एक जीवन से दूसरे जीवन में पहुँचते हैं। अतः बुद्ध ने कहा है कि आसक्ति से विचारों और अज्ञानता से कर्मफल के प्रवाह से नामरूप के आवागमन को बढ़ावा न दें। सद्मार्गगमन का उचित निर्णय लें। बुद्ध लोगों को समझाते थे कि आगमों, आप्तपुरुषों, वर्तमान विभिन्न सिद्धान्तों एवं मेरे वचनों को भी भली-भाँति जानकर तर्कपूर्ण ज्ञान कसौटी से परखकर स्वीकार करना ही हित में होता है। तर्कपूर्ण कसौटी पर परखे बिना विश्वास करना अंधविश्वास होता है, उससे वचें। उम्र के अन्तिम पड़ाव में आम्रपाली भी अपने जीवन के विविध प्रसंगों के माध्यम से बुद्ध के वचनों की सत्यता को पुष्ट करती थी। आम्रपाली का यह प्रयास सूचित करता है कि जो लोग ज्ञान प्राप्त कर चुके हैं, वे अपने जीवनानुभवों के सद्ज्ञान व अपने सदाचरण से अन्य लोगों के ज्ञान मार्ग को प्रशस्त करें। यही तथागत का उद्देश्य रहा है-

जगद्धिताय बुद्धो हि बोधमाप्नोति शाश्वतम्।
अतेव च जीवानां सर्वेषां तु हिते रतः।।

संदर्भ :–

[१] हितोवदेश प्रस्तावना –१०

[२] संख्यकारिका – १

[३] वेदान्तसार।

[४] जातक – ३ पृ. ६०

[५] जातक – ३ पृ. ६१ एवं ४ पृ २४६

[६] जातक ६ पृ. २२८

[७] बुद्धचरित २२/१६ कुलयोषिद्विगर्हिताम् । बुद्धचरित २२/२०

[८] हरिश्चन्द्रोपाख्यान

[९] आचार्य चतुरसेन कृत वैशाली की नगरबधू।

[१०] आचार्य चतुरसेन कृत बैशाली की नगरवधू।

[११] धम्मपद – १४६

[१२] हितोपदेश – ३६

[१३] धम्मपद – १६०

[१४] हितोपदेश– मित्रलाभ–कथामुख–३४

[१५] बुद्धचरित २२/१५–१८

[१६] बुद्धचरित २२/३१

[१७] भोगानामसमीक्ष्यैव सेवनंदुःखकारणम्। नराणां विषयासक्तिर्निदानं विपदा ध्रुवम्।। बुद्धचरित २२/३५

[१८] धम्मपद – १०६

[१९] आयुस्तु यौवनं हन्ति तथा मृत्युश्च जीवनम्। रोगः हारी रमाहन्ति धर्महन्ता न विद्यते।। बुद्धचरित २२/४५

[२०] अप्रियस्य च संयोगे वियोगोऽपि प्रियस्य च। ध्रुवंसुखानुगानां हि धर्ममार्गस्तु निश्चलः।। बुद्धचरित २२/४६
पराधीने परं दुःखं स्वाधीने च महत्सुखम्।। बुद्धचरित २२/४७ पूर्वार्द्ध

[२१] हीनं धम्मं न सेवेय्य,पमादेन न संवसे। मिच्छादिट्ठिं न सेवेय्य, न सिया लोक वड्ढनो।। धम्मपद १६७

[२२] बुद्धचरित २२/५३ उत्तरार्द्ध

[२३] बीजं विनिक्षप्य यथा सुकाले, क्षेत्रे कृती तुष्यति भूमिधारो।
तथाम्रपालीं विधिनोपदिश्य, तुतोष तस्यां स च कालवेत्ता।। बुद्धचरित २२/५५

[२४] थेरीगाथा–२६६

[२५] थेरीगाथा–२७०